श्री सोलहकारण पूजा

सोलहकारण भाय तीर्थंकर जे भये।
हरषे इन्द्र अपार मेरुपै ले गये।।
पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चावसौं।
हमहू षोडश कारण भावें भावसौं।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणानि! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट्।

झारी से जल

कंचन-झारी निरमल नीर, पूजौं जिनवर गुण गंभीर।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।
दरश विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पददाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।।१।।

चन्दन जल

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवर के पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।। दरश...

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्व. स्वाहा।।२।।

सफेद चावल

तंदुल धवल सुगन्ध अनूप, पूजौं जिनवर तिहूँ जगधूप।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।। दरश...

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

पीले चावल

फूल सुगन्ध मधुप-गुंजार, पूजौं जिनवर जग-आधार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।। दरश...

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

सद नेवज बहुविधि पकवान, पूजौं श्रीजिनवर गुणखान।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।

दरश विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पददाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

दीपक-ज्योति तिमिर क्षयकार, पूजूं श्रीजिन केवलधार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।। दरश...

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।।६।।

अगर कपूर गंध शुभ खेय, श्रीजिनवर आगे महकेय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।। दरश...

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

श्रीफल आदि बहुत फलसार, पूजौं जिन वाँछित-दातार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।। दरश...

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्ष फल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

जलफल आठों दरव चढ़ाय, 'द्यानत' वरत करौं मनलाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।। दरश...

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

सोलह अंगो के सोलह अर्घ

सवैया तेईसा

दर्शन शुद्ध न होवत जो लग, तो लग जीव मिथ्याती कहावे।
काल अनंत फिरो भव में, महादुःखनको कहुं पार न पावे।।
दोष पचीस रहित गुण अम्बुधि, सम्यकदरशन शुद्ध ठरावै।
'ज्ञान' कहे नर सोहि बड़ो, मिथ्यात्व तजे जिन-मारग ध्यावै।।

ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्धि भावनायै नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

देव तथा गुरुराय तथा, तप संयम शील व्रतादिक-धारी।
पापके हारक कामके छारक, शल्य-निवारक कर्म-निवारी।।
धर्म के धीर कषाय के भेदक, पंच प्रकार संसार के तारी।
'ज्ञान' कहे विनयो सुखकारक, भव धरों मन राखो विचारी।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

शील सदा सुखकारक है, अतिचार-विवर्जित निर्मल कीजे।
दानव देव करे तसु सेव, विषानल भूत पिशाच पतीजे।।
शील बड़ों जगमें हथियार, जु शील को उपमा काहेकी दीजे।
'ज्ञान' कहे नहिं शील बराबर, तातैं सदा दृढ़ शील धरीजे।।

ॐ ह्रीं निरतिचार शीलव्रत भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

ज्ञान सदा जिनराज को भाषित, आलस छोड़ पढ़े जो पढ़ावे।
द्वादस दोउ अनेकहुँ भेद, सुनाम मती श्रुति पंचम पावे।।
चारहुँ भेद निरन्तर भाषित, ज्ञान अभीक्षण शुद्ध कहावे।
'ज्ञान' कहे श्रुत भेद अनेक जु, लोकालोक हि प्रगट दिखावे।।

ॐ ह्रीं अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

भ्रात न तात न पुत्र कलत्र न, संयम सज्जन ए सब खोटो।
मन्दिर सुन्दर काय सखा, सबको इसको हम अंतर मोटो।।
भाउके भव धरी मन भेदन, नाहिं संवेग पदारथ छोटो।
'ज्ञान' कहे शिव साधन को जैसो, साहको काम करे जु वणोटो।।

ॐ ह्रीं संवेग भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

पात्र चतविंध देख अनूपम, दान चतुर्विध भावसु दीजे।
शक्ति-समान अभ्यागतको, अति आदर से प्रणिपत्य करीजे।।
देवत जे नर दान सुपात्रहिं, तास अनेकहिं कारण सीजे।
बोलत 'ज्ञान' देहि शुभ दान जु, भेग सुभूमि महासुख लीजे।।

ॐ ह्रीं शक्तितस्त्याग भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

कर्म कठोर गिरावन को निज, शक्ति-समान उपोषण कीजे।

बारह भेद तपे तप सुन्दर, पाप जलांजलि काहे न दीजे।
भाव धरी तप धोर करो, नर जन्म सदा फल काहे न लीजे।।
'ज्ञान' कहे तप जे नर भावत, ताके अनेकहिं पातक छीजे।

ॐ ह्रीं शक्तितस्तपोभावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

साधुसमाधि करो नर भावक, पुण्य बड़ो उपजे अध छीजे।
साधु की संगति धर्मको कारण, भक्ति कर परमारथ सीजे।।
साधु समाधि करे भव छूटत, कीर्ति-छटा त्रैलोक में गाजे।
'ज्ञान' कहे यह साधु बड़ो, गिरिश्रृङ्ग् गुफा बिच जाय विराजे।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

कर्म के योग व्यथा उदई मुनि, पुंगव कुन्तसभेषज कीजे।
पीत कफान लसास भगन्दर, तापको सूल महागद छीजे।।
भोजन साथ बनायके औषध, पथ्य कुपथ्य-विचार के दीजे।
'ज्ञान' कहे नित ऐसी वैय्यावृत्य करे तस देव पसीजे।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्यकरण भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

देव सदा अरिहन्त भजो जई, दोष अठारा किये अति दूरा।
पाप पखाल भये अति निर्मल, कर्म कठोर किए चकचूरा।।
दिव्य अनन्त चतुष्टयशोभित, घोर मिथ्यान्ध-निवारण सूरा।
'ज्ञान' कहे जिनराज अराधो, निरन्तर जै गुण-मन्दिर पूरा।।

ॐ ह्रीं अर्हद्भक्ति भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

देवत ही उपदेश अनेक सु, आप सदा परमारथ-धारी।
देश विदेश विहार करें, दश धर्म धरें भव-पार उतारी।।
ऐसे अचारज भाव धरी भज, सो शिव चाहत कर्म निवारी।
'ज्ञान' कहे गुरु-भक्ति करो नर, देखत ही मनमांहि विचारी।।

ॐ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।११।।

आगम छन्द पुराण पढ़ावत, साहित तर्क वितर्क बखाने।
काव्य कथा नव नाटक पूजन, ज्योतिष वैद्यक शास्त्र प्रमाने।।

ऐसे बहुश्रुत साधु मुनीश्वर, जो मनमें दोउ भाव न आने।
बोलत 'ज्ञान' धरी मनसान जु, भाग्य विशेषतें जानहिं जाने।।

ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।१२।।

द्वादस अंग उपांग सदागम, ताकी निरंतर भक्ति करावे।
वेद अनूपम चार कहे तस, अर्थ भले मन मांहि ठरावे।।
पढ़ बहुभाव लिखो निज अक्षर, भक्ति करी बड़ि पूज रचावे।
'ज्ञान' कहे जिन आगम-भक्ति, करो सद्बुद्धि बहुश्रुत पावे।।

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।१३।।

भाव धरे समता सब जीवसु स्तोत्र पढ़े मुख से मनहारी।
कायोत्सर्ग करे मन प्रीतसुं, वंदन देव-तणों भव तारी।।
ध्यान धरी मद दूर करो, दोउ बेर करे पड़कम्मन भरी।
'ज्ञान' कहे मुनि सो धनवन्त जु, दर्शन ज्ञान चरित्र उधारी।।

ॐ ह्रीं आवश्यकापरिहाणि भावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।१४।।

जिन-पूजा रचों परमारथसूं, जिन आगे नृत्य महोत्सव ठाणों।
गावत गीत बजावत ढ़ोल, मदंगके नाद सुधांग बखाणों।
संग प्रतिष्ठा रचो जल-जातरा, सदगुरु को साहमो कर आणो।
'ज्ञान' कहे जिन मार्ग-प्रभावन भाग्य-विशेषसुं जानहिं जाणो।।

ॐ ह्रीं मार्ग प्रभावनायें नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।१५।।

गौरव भाव धरो मन से मुनि-पुङ्ग्वको नित वत्सल कीजे।
शीलके धारक भव्यके तारक, तासु निरंतर स्नेह धरीजे।।
धेनु यथा निजबालकके, अपने जिय छोड़ि न और पतीजे।
'ज्ञान' कहे भवि लोक सुनो, जिन वत्सल भवधरे अघ छीजे।।

ॐ ह्रीं प्रवचन-वात्सल्य भावनायै नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।।१६।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यै नमः, ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नतायै नमः, ॐ ह्रीं शीलव्रताय नमः, ॐ ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोंपयोगाय नमः, ॐ ह्रीं संवेगाय नमः, ॐ ह्रीं शक्तिस्त्सरगाय नमः, ॐ ह्रीं शक्तितस्तपसेनमः, ॐ ह्रीं साधुसमाध्यै नमः, ॐ ह्रीं वैयावृत्यकरणाय नमः, ॐ ह्रीं अर्हद्भक्त्यै नमः, ॐ ह्रीं आचार्यभक्त्यै नमः, ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्त्यै नमः, ॐ ह्रीं प्रवचनभक्त्यै नमः, ॐ ह्रीं आवश्यकापरिहाण्यै नमः, ॐ ह्रीं मार्गप्रभावनायै नमः, ॐ ह्रीं प्रवचनवत्सलत्वाय नमः ।।१६।।

जयमाला

षोडश कारण गुण करैं, हरै चतुरगति-वास।
पाप पुण्य सब नाशके, ज्ञान-भान परकाश।।१।।

दरशविशुद्धि धरे जो कोई, ताको आवागमन न होई।
विनय महाधारै जो प्रानी, शिव-वनिता की सखी बखानी।।२।।

शील सदा दृढ जो नर पालै, सो औरनकी आपद टालै।
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं, ताके मोह-महातम नाहीं।।३।।

जो संवेग-भाव विस्तारै, सुरंग-मुकति-पद आप निहारै।
दान देय मन हरष विशेखै, इह भव जस परभव सुख देखै।।४।।

जो तप तपै खपे अभिलाषा, चूरे करम-शिखर गुरुभाषा।
साधु समाधि सदा मन लावै, तिहूं जग भोग भोगि शिव जावै।।५।।

निशि-दिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भव नीर तिरैया।
जो अरहंत भक्ति मन आनै, सो जन विषय कषाय न जानै।।६।।

जो आचरज-भगति करै हैं, सो निर्मल आचार धरै हैं।
बहुश्रुतवंत-भगति जो करई, सो नर संपूरन श्रुत धरई।।७।।

प्रवचन-भक्ति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानन्द-दाता।
षट आवश्य काल जो साधै, सो ही रत्न-त्रय आराधै।।८।।

धरम-प्रभाव करै जो ज्ञानी, तिन शिव-मारग रीति पिछानी।
वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तिर्थंकर पदवी पावै।।९।।

दोहा

येही षोडश भावना, सहित धरै व्रत जोय।
देव-इन्द्र-नर वंद्य-पद, 'द्यानत' शिवपद होय।।

ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्धया दिषोडश कारणेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सवैया इकतीसा

सुन्दर षोडशकारण भावन निर्मल चित सुधारक धारै, कर्म अनेक हने अति दुर्धर जन्म जरा भय मृत्यु निवारै।
दुःख दारिद्र विपत्ति हरै भव सागर को तर पार उतारै। 'ज्ञान' कहे यहि षोडशकारण, कर्म निवारण सिद्धि सुधारै।

इत्याशीर्वाद।